International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 8, August 2017
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

स्वराज एवं गाँधी

डॉ. हनुमान प्रसाद मीना
व्याख्याता राजनीति विज्ञान

डॉ. सुनीता मीना
व्याख्याता इतिहास
राजकीय स्नातकोतर महाविद्यालय, सवाई माधोपुर

गाँधी के अनुसार स्वराज का अर्थ सिर्फ राजनैतिक स्वराज या स्वतंत्रता नहीं थी बल्कि स्वराज एक समावेशी अवधारणा है राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और नैतिक यह जोर देकर कहा जा सकता है कि मनुष्य के यथासंभव पूर्ण होने की आवश्यकता है। गाँधी ने स्वराज शब्द वेदों से लिया है। स्वराज का एक अर्थ स्व–शासन और आत्म–नियंत्रण है और इसके अंग्रेजी उपयोग से अलग है, जिसका अर्थ है बिना किसी बाधा के स्वतंत्रता । गाँधी के लिए स्वराज का मतलब सकारात्मक स्वतंत्रता भी था, जिसमें हर संभव तरीके से राजनीति की प्रक्रिया में भाग लेना था। इसका तात्पर्य सहभागी लोकतंत्र से है क्योंकि नागरिक और राज्य के बीच अंतरंग संबंध मौजूद होते हैं । बहुसंख्यक क्षतिपूर्ति के लिए गाँधी की चिंता ने उन्हें अपने सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक दर्शन के केंद्र में, गाँव पर अपना ध्यान केंद्रित करने के साथ ग्राम विकेंद्रीकरण या ग्राम स्वराज की धारणा को आगे बढ़ाने के लिए प्रेरित किया ।गाँधी न कोई दार्शनिक थे और न ही कोई राजनीतिक चिंतक । तथापि ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध संघर्ष में उसने व्यक्ति, समाज, अर्थव्यवस्था, राज्य, नैतिकता तथा कार्यपद्धति के रूप में अहिंसा पर आधारित अपने विशिष्ट विचारों का निर्माण किया । उसने राजनीति में आदर्शवाद का पुट जोड़ा और यह सिद्ध करने की कोशिश की कि नैतिकता ही राजनीति का सच्चा और एकमात्र आधार है। उसके चिंतन के अधिकतर प्रेरणास्त्रोत स्वदेशी थे परन्तु उसने पश्चिमी दार्शनिक चिंतन के मानवतावादी और उग्रवादी विचारों को भी आत्मसात किया। इस मिश्रण से उसने विचार और व्यवहार का एक ऐसा कार्यक्रम तैयार किया जो शुद्ध रूप से उसका अपना था।

गाँधी का राजनीतिक और नैतिक चिन्तन सरल आध्यात्मिकता पर आधारित है। उसके अनुसार यह ब्रह्माण्ड सर्वोच्च बौद्धिकता अथवा सत्य या ईश्वर द्वारा संचालित होता है। यह बौद्धिकता सभी प्राणियों में निवास करती है, विशेषकर व्यक्ति में जिसे आत्म चेतना अथवा आत्मा का नाम दिया जाता है। यह आत्मा ही मानव जीवन का सार है। क्योंकि संपूर्ण मानव मात्र इस दैविक अंश से अनुप्राणित होते हैं अतः अंततोगत्वा सभी एक हैं। एक समान हैं। क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति में दैविक अंश विद्यमान हैं, इसलिए प्रत्येक व्यक्ति जन्म से ही भला होता है तथा इस भलाई की खोज और उसका संवर्धन ही मानव जीवन का उद्देश्य है।[1] गांधी ने इसे आत्म–अनुशासन और अहिंसा द्वारा आत्मज्ञान की प्राप्ति भी कहा है। दूसरे शब्दों में, मानवीय परिपूर्णता केवल एक आर्दश ही नहीं है बल्कि प्रत्येक व्यक्ति में इसे प्राप्त करने की प्रबल इच्छा भी होती है। व्यक्ति का सामाजिक और राजनीतिक जीवन इस भलाई अथवा गुण के ज्ञान और प्रकाश से

संचालित होना चाहिए। व्यक्ति का जीवन वास्तव में इस महान सत्य की खोज है, चाहे इस खोज के मार्ग में जितनी ही बाधाएँ आयें। गांधी व्यक्ति की परिपूर्णता के विचार अधिक प्रभावित थे कि उनका दृढ़ विश्वास था कि अंत में केवल सत्य और भलाई की ही जीत होगी और असत्य पतझड़ के पत्तों की तरह गिर कर बिखर जाऐगा। सत्य और भलाई की इस खोज में बुराई का ज्ञान, उसकी समझ तथा उसे ठीक करना व्यक्ति की रचनात्मक शक्ति के लिए एक बड़ी चुनौती है। इस अच्छाई और बुराई के अंतर के संदर्भ में ही गांधी के भारतीय समाज की वर्णव्यवस्था, धर्म, छुआछूत, संपत्ति, औद्योगीकरण, राजनीति और राज्य के प्रति विचारों को समझा जा सकता है[2]।

स्वराज पर गांधी के विचार–परंपरागत राजनीतिक सिद्धांत का संबंध व्यक्ति की स्वतंत्रता तथा राज्य की सत्ता के अध्ययन से रहा है। परंतु भारतीय राजनीतिक चिंतन में यह स्वराज अथवा आत्म–शासन की धारणा रहा है जो राजव्यवस्था के अंतर्गत आत्म–निर्णय अथवा स्वाधीनता प्राप्त करने का तरीका है। आधुनिक युग में स्वराज शब्द का प्रयोग दादा भाई नौरोजी तथा तिलक ने राष्ट्रीय स्वतंत्रता के संदर्भ में किया। यहाँ इसका अर्थ संपूर्ण राष्ट्र से था, किसी व्यक्ति विशेष से नहीं। इसी तरह उग्रवादियों ने ब्रिटिश वस्तुओं के बहिष्कार को न्यायोचित ठहराने के लिए एक अन्य शब्द स्वदेशी का प्रयोग किया। तथापि स्वराज शब्द को मूल अर्थ में प्रयुक्त करने का श्रेय गांधी की जाता है जहाँ इसे व्यक्तिगत आत्मशासन के रूप में प्रयोग करके राष्ट्रीय स्वशासन तथा आत्मनिर्भरता के साथ जोड़ा गया। गांधी ने स्वदेशी को स्वराज प्राप्त करने का माध्यम माना। उसने व्यक्तिगत स्वशासन अथवा व्यक्तिगत स्वतंत्रता तथा सामुदायिक स्वशासन अर्थात् राष्ट्रीय स्वतंत्रता में सामंजस्य लाने की कोशिश की।

स्वराज की धारणा का विश्लेषण करते हुए गांधी ने व्यापक स्तर पर संपूर्ण नैतिक स्वतंत्रता तथा संकुचित अर्थ में व्यक्ति अथवा राष्ट्र की नकारात्मक स्वतंत्रता में विशेषकर अंतर किया। स्वराज का मूल अर्थ है आत्म–शासन। इसे अंत करण का अनुशासित शासन भी कहा जा सकता है। स्वतंत्रता का अर्थ है बिना रोक टोक अपनी मनमर्जी करने की छूट। इसके विपरीत स्वराज की धारणा सकारात्मक है। स्वतंत्रता नकारात्मक है.. स्वराज एक पवित्र शब्द है, एक दैविक शब्द है जिसका अर्थ है आत्मशासन तथा आत्म–नियंत्रण, न कि सभी के बंधनों से मुक्ति[3] । स्वराज का अर्थ व्यक्ति अथवा राष्ट्र की ऐसी स्वतंत्रता से नहीं है जो दूसरों से कटी हुई अलग–थलग हो। यह ऐसी स्वतंत्रता भी नहीं है जिसमें दूसरों के प्रति नैतिक उत्तरदायित्व की अभाव है जो ऐसी ही स्वतंत्रता के दावेदार है। एक स्वतंत्र व्यक्ति अथवा राष्ट्र न तो स्वार्थी हो सकता है और न ही दूसरों से अलग थलग ।

आत्मशासन का अर्थ आत्मनिर्भरता भी है एक व्यक्ति अथवा राष्ट्र अपनी स्वतंत्रता स्वय अनुभव करता है । स्वयम् को स्वतंत्र अनुभव करना और वास्तविक स्तर पर स्वतंत्र होना एक समान नहीं है। दूसरे शब्दों में, दूसरों के प्रत्यन से प्राप्त की गई स्वतंत्रता, चाहे वह कितनी ही हितैषी हो, उतनी देर तक संभव होगी जब तक दूसरे की दयादृष्टि रहेगी । स्वराज की धारणा से अभिप्राय है कि व्यक्ति आत्म–शासन के लिए सक्षम है अर्थात् वह इस बात की जांच करने योग्य हैं कि वह कब वास्तविक दृष्टिकोण से स्वतंत्र है तथा वह इसका परीक्षण दूसरों पर अपनी निर्भरता की सीमा से कर सकता है। गांधी के स्वशासन के इस अधिकार को जन्मजात माना। गांधी के अनुसार उसे आज तक यह समझ में नहीं आया कि उन लोगों को, जो स्वयम को योग्य एवम् अनुभवी कहते हैं, दूसरों को स्वराज के अधिकार से वंचित करने में क्या मजा आता है। वे लोग जो

स्वतंत्रता का दम भरते हैं और दूसरों को उनकी स्वतंत्रता से वंचित करते हैं, वास्तव में स्वतंत्रता की धारणा में विश्वास करने पर शक पैदा करते है [4] गांधी ने व्यक्ति के स्वशासन अथवा स्वतंत्रता के अधिकार को व्यक्ति की स्वायत्त नैतिक प्रकृति का अंग माना। समाज का अस्तित्व भी व्यक्ति की इस वास्तविक स्वतंत्रता पर निर्भर माना। यदि व्यक्ति को इस स्वतंत्रता से वंचित कर दिया जाये तो वह एक यंत्र मात्र बन कर रह जायेगा तथा समाज का ही नाश हो जायेगा । व्यक्ति के स्वतंत्रता के अधिकार को छीनकर कोई भी समाज अपना निर्माण नहीं कर सकता । मिल की नकारात्मक स्वतंत्रता के विपरीत गांधी ने व्यक्तिगत स्वतंत्रता की नैतिक तथा सामाजिक अनिवार्यता पर बल दिया।

स्वराज की एक अन्य विशेषता है कि यदि स्वतंत्रता व्यक्ति की प्रकृति का एक अंग है तो यह उसे दिया जाने वाला उपहार नहीं हैं । इसे केवल आत्म– जागृति तथा आत्म–प्रयत्न द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। गांधी ने कहा– हमारे द्वारा प्राप्त की गई बाहरी स्वतंत्रता वास्तव में हमारी आंतरिक स्वतंत्रता की स्थिति के अनुपात पर निर्भर करती है.... हमारी सारी ऊर्जा आंतरिक सुधार पर केंद्रित होनी चाहिए। दूसरे शब्दों में गांधी ने स्वतंत्रता प्राप्ती के संदर्भ में सारा उत्तरदायित्व व्यक्ति पर डाल दिया। व्यक्ति की स्वतंत्रता पर कोई भी बाहरी खतरा दूसरों की वजह से कम तथा हमारी आंतरिक कमजोरी के कारण अधिक है। अतः गांधी की स्वराज की धारणा के साथ जुड़ी हुई एक अन्य धारणा आत्मशुद्धि की बात की जो समाज तथा राजनीति के संदर्भ में नैतिक स्तर पर व्यक्ति के स्वतंत्रता के दावे को प्रभावशाली बनाने के लिए शक्ति तथा क्षमता प्रदान करती है। स्वतंत्रता के अधिकार का दावा करने का अर्थ स्वतंत्रता को सुरक्षित एवम् संरक्षित रखने की तत्परता को भी स्वीकार करना । गांधी की स्वराज की धारणा व्यक्ति एवम् राष्ट्र दोनों पर समान रूप से लागू होती है। उसने व्यक्तिगत तथा सामूहिक स्वशासन, विशेषतः व्यक्ति तथा राष्ट्रीय स्वतंत्रता के संबंध को बार–बार दोहराया। स्वराज के लिए पहला कदम व्यक्ति से आरंभ होता है। यह एक वास्तविक सच्चाई है कि जैसा व्यक्ति जैसा राज्य । वास्तव में गांधी ने एक आत्म–चेतन व्यक्ति को वरीयता दी तथा सामूहिक ईकाई को महत्त्व नहीं दिया। जैसा कि उसने घोषणा की समुदाय के स्वराज का अर्थ है समुदाय में रहने वाले व्यक्तियों का स्वराज [5]। स्वयं पर शासन ही असली स्वराज है, इसे मोक्ष अथवा मुक्ति का नाम भी दिया जा सकता है। इसी तरह एक अन्य स्थान पर गांधी ने समान विचार व्यक्त किये, राजनीतिक स्वशासन अर्थात् समाज के बहुसंख्यक पुरूषों एवम् स्त्रियों के लिये स्वशासन व्यक्तिगत स्वशासन से बेहतर नहीं है और इसे भी ऐसे ही प्राप्त करने की आवश्यकता है जैसे व्यक्तिगत स्वशासन ।

गांधी की स्वराज की धारणा के न्यूनतम तथा अधिकतम अर्थ भी हैं। न्यूनतम स्तर पर इसका अर्थ है उन सभी के विरुद्ध आत्म–निर्णय का प्राकृतिक अधिकार जो हमारे ऊपर शासन करना चाहते हैं तथा हमारी स्वतंत्रता को सीमित करना चाहते हैं। अधिकतम स्तर पर इसका अभिप्राय है हम स्वराज की धारणा स्वयम् पर लागू करते है स्वयम् को यह याद दिलाने के लिये कि हम यह स्वतंत्रता केवल अपनी कमजोरी के कारण ही खो सकते हैं, तथा बिना अनुशासन अथवा आत्म–नियंत्रण के हम इस स्वतंत्रता का गलत प्रयोग भी कर सकते हैं। इसी तरह जब हम राष्ट्रीय स्वतंत्रता के लिए दावा करते हैं तो हम वास्तव में स्वयम् गलतियाँ करने का अधिकार मांग रहे हैं, हम स्वशासन का अधिकार मांग रहे हैं चाहे वह स्वशासन विदेशी सर्वोत्तम तथा कुशल सरकार की तुलना में अकुशल अथवा निम्न हो। इसी तरह जब हम राष्ट्रीय आपदा का आंकलन करें तो

हमें अपनी स्वतंत्रता खोने में हमारी खुद की कमजोरी को भी स्वीकार करना चाहिए [6]। गांधी के अनुसार स्वतंत्रता के लिए संघर्ष इसकी कीमत दिये बिना नहीं लड़े जाते । गांधी स्वराज की धारणा को काफी उच्च स्तर तक ले गये जब उसने घोषणा की कि स्वराज अर्थात् प्रभावी एवम् संपूर्ण स्वतंत्रता के लिये बाहरी हस्तक्षेप से स्वतंत्रता एक आवश्यक शर्त है परंतु पर्याप्त नहीं क्योंकि अंततोगत्वा स्वराज स्वशासन की देन है। इसी तरह राष्ट्रीय स्वशासन के लिये राष्ट्रीय स्वतंत्रता अपने आप में एक आवश्यक शर्त हो सकती है परंतु पर्याप्त नहीं। स्वराज का अर्थ है सरकारी नियंत्रण से स्वयात्त होने का निरन्तर प्रयत्न चाहे वह सरकार विदेशी हो या राष्ट्रीय । स्वतंत्रता प्राप्ती बाद भी स्वराज सरकार का अर्थ यह नहीं होगा कि लोग अपने जीवन की सभी गतिविधियों के नियंत्रण के लिए सरकार का मुंह देखें। स्वराज का अर्थ यह नहीं है कि समाज में थोड़े से लोग अधिकतर लोगों पर शासन करने की शक्ति ग्रहण कर लें। असली स्वराज का अर्थ होगा आम जनता के पास इतनी शक्ति कि वह सरकार की शक्ति के दुरूपयोग को रोक सके। राष्ट्रीय आंदोलन के एक नैतिक नेता के रूप में गांधी का तर्क था कि जहाँ भारतवासी विदेशी शासन से मुक्ति पाने के नैतिक अधिकार का प्रयोग करें, वहाँ वे अपनी दासता के लिये विदेशी शासकों को नहीं बल्कि अपनी कमजोरी को जिम्मेदार ठहरायें। यह शायद इसीलिये कि स्वतंत्रता प्राप्त के बाद भी गांधी का मानना था कि भारत को असली स्वराज प्राप्त नहीं हुआ और उसका स्वशासन प्राप्त करने का प्रयत्न जारी रहा। जैसा उसने लिखा, स्वतंत्र का अर्थ है देश के निम्नतम व्यक्ति के लिये स्वतंत्रता और स्वतंत्रता केवल ब्रिटिश शासन से नहीं बल्कि सभी प्रकार की जंजीरों से। स्वराज का अर्थ किंग लौग की जगह किंग स्ट्रोक को बिठाना नहीं हैं। भारत की स्वतंत्रता उतनी देर तक सच्ची स्वतंत्रता नहीं होगी जब तक एक व्यक्ति, चाहे वह कितना ही महान क्यों न हो, करोड़ों लोगों का जीवन, स्वतंत्रता और सम्पत्ति अपने हथेली पर रखता हो। राज्य एक कृत्रिम, अप्राकृतिक तथा असभ्य संस्था जिसकी समाप्ति स्वशासन की अनिवार्य शर्त है। यदि उल्टे तरीके से देखे तो स्वराज व्यक्ति के आत्मज्ञान, आत्मप्रतिष्ठा तथा आत्म–अनुशासन पर निर्भर करता है और यदि जनसाधारण में सामूहिक स्तर पर ये भावनायें वर्तमान है तो उन्होंने स्वराज प्राप्त कर लिया है। वास्तव में कोई भी राष्ट्र औपचारिक स्तर पर भी स्वराज प्राप्त नहीं कर सकता जब तक यह ऐसे जन आंदोलन का परिणाम न हो जिसमें सभी लोगों की सक्रिय भागेदारी रही हो । राष्ट्रीय स्तर पर स्वराज का अर्थ है आम लोगों का सामूहिक शासन– न्यायपूर्ण शासन–न कि बहुमत का शासन यह एक ऐसी अवस्था है जहाँ गूंगों को जुबान मिल सके तथा अपंग चल सके। स्वराज हिंसा द्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता। इसके लिए संगठन तथा एकता की आवश्यकता है[7]।

संक्षेप में, गांधी के लिए स्वराज के कई अर्थ थे। यह व्यक्तिगत स्वराज था जिसका अर्थ था आत्मज्ञान, आत्मशासन तथा आत्मचयन। व्यापक स्तर पर यह आत्म– सुरक्षा, आत्म आलोचना, आत्म–शुद्धि, आत्म–संयम तथा आत्मसिद्धी से भी जुड़ा हुआ था। स्वराज कैसे प्राप्त किया जाये–अन्य भारतीय नेताओं की तरह गाँधी को भी आधुनिक पूँजीवादी उदारवादी राज्य को स्वीकार करने में कठिनाई हुई । गाँधी ने आधुनिक राज्य को राष्ट्र पर आरोपित यान्त्रिक प्रबंध माना । आधुनिक राज्य की राजनीतिक शक्ति अपने आप में एक साध्य है न कि जन साधारण की परिस्थितियों को बेहतर बनाने का साधन। उसने वर्तमान राज्य को जोर जबरदस्ती पर आधारित राज्य तथा संस्थागत हिंसा का प्रतीक माना। इसके अतिरिक्त औद्योगीकरण के परिणामस्वरूप राज्य सर्वव्यापी बन गया है तथा

व्यक्तिगत जीवन के हर पहलू पर छा गया है। आधुनिक राज्य को गांधी ने एक आत्माहीन यंत्र का नाम दिया। उसका निष्कर्ष था कि अपने वर्तमान रूप में राज्य व्यक्ति की आत्मिक एवम् नैतिक प्रकृति के साथ मेल नहीं खाता। अतः यदि व्यक्ति को स्वशासन प्राप्त करना है और अपना नैतिक स्तर ऊँचा उठाना है तो उसे जीवन के पुनः निर्माण के लिए नया विकल्प ढूंढना होगा।

आदर्श राज्य की कल्पना–क्योंकि अपने वर्तमान रूप में राज्य हिंसा का प्रतिनिधित्व करता है, मजबूरी की भाषा बोलता है, आत्म–निर्णय और व्यक्तिगत उपक्रम को हतोत्साहित करता है, अतः यह व्यक्ति को अमानवीय बना देता है। तथापि यदि इसे व्यक्तिगत विकास में बाधा नहीं बनना है, तो इसे इस तरह संगठित किया जाना चाहिए कि यह न्यूनतम बल प्रयोग करे और व्यक्ति के वांछनीय उपक्रम को अधिक से अधिक अवसर दे । गाँधी हिंसा और शोषण पर आधारित वर्तमान राजनीतिक ढांचे को समाप्त करके इसे एक ऐसी व्यवस्था से प्रतिस्थापित करना चाहते थे जो प्रत्येक व्यक्ति की सहमति पर आधारित हो और जिसका उद्देश्य अहिंसात्मक तरीकों से व्यक्ति की भलाई । इस विकल्प के रूप में गाँधी एक राज्यविहीन राज्य–व्यवस्था की चर्चा करते हैं। आदर्श रूप में, गाँधी एक प्रबुद्ध अराजकतावादी व्यवस्था के समर्थक थे जिसमें सामाजिक दृष्टिकोण से उत्तरदायी और नैतिक दृष्टिकोण से अनुशासित नर और नारी एक दूसरे को कभी हानि नहीं पहुँचायेंगे और जिन्हें राज्य–व्यवस्था कि खास आवश्यकता नहीं होगी[8]। परंतु क्योंकि ऐसा व्यवहारिक स्तर पर संभव नहीं है, अतः गाँधी ने एक व्यवस्थित अराजकतावादी व्यवस्था को चुना जिसमें लोग अधिकतम स्वतंत्रता के अनुकूल न्यूनतम राजनीतिक व्यवस्था की आवश्यकता अनुभव करें। यह ऐसा राज्य होगा जिसमें प्रभुसत्ता समाज के प्रत्येक व्यक्ति में निवास करेंगी और जो अपना शासक खुद होगा। इस व्यवस्थित अराजकतावाद के तीन पक्ष हैं (1) ग्राम– जनपद पर आधारित अहिंसात्मक राज्य, (2) स्वराज, तथा (3) राम–राज्य ।

अहिंसात्मक राज्य –एक सच्चे अहिंसात्मक राज्य का आधार छोटे–छोटे स्वशासित और आत्मनिर्भर ग्राम समुदाय होंगे जो अपने सारे कार्य नैतिक दबाव और सामाजिक सहायता द्वारा संपन्न करेंगे। पंचायत के रूप में इन समुदायों के अपने राजनीतिक ढांचे होंगे। 18 तथा 50 साल के बीच के ग्रामनिवासियों द्वारा चुनी गयी 5 व्यक्तियों की इस पंचायत के पास कार्यकारी, वैधानिक तथा न्यायिक शक्तियाँ होंगी। व्यवस्था और सामन्जस्य बनाये रखने के उद्देश्य से यह पंचायत अधिकतर नैतिक सत्ता और जनमत के दबाव पर निर्भर रहेगी। गाँधी का विश्वास था कि धीरे–धीरे ये ग्राम समुदाय सामाजिक उत्तरदायित्व, सामंजस्य, स्थानीय शक्ति और नागरिक गुणों का आदर्श उदाहरण प्रस्तुत करेंगे। आत्म–निर्भर ग्राम समुदायों से ऊपर ग्राम समूहों से बना तालुक्का होगा । तालुक्कओं का समूह जिला कहलायेगा, जिलों का समूह प्रांत । प्रत्येक संस्था का निर्माण अपने समूह के चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा होगा। प्रत्येक संस्था के पास अत्यधिक स्वायत्तता होगी तथा वह सामुदायिक भावना से प्रेरित रहेगी। प्रत्येक प्रांत को राष्ट्रीय ढांचे के अंतर्गत अपनी स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप संविधान निर्माण की छूट होगी। केंद्रीय सरकार के पास प्रांतों को प्रबंधित करने के लिए काफी शक्ति होगी परंतु इतनी नहीं कि वह उन पर प्रभुत्त्व जमा सके। इस राज्य व्यवस्था को एक वृहत्त नौकरशाही ढांचे की आवश्यकता नहीं होगी क्योंकि नीति निर्माण और निर्णय अधिकतर प्रांतों, जिला ताल्लुकों और पंचायतों में विकेंद्रित होंगे। इसी तरह पुलिस की आवश्यकता भी न के बराबर होगी

क्योंकि जहाँ कोई आदमी भूखा नहीं होगा वहाँ अपराध भी लगभग समाप्त हो जायेंगे। प्रत्येक नागरिक का दूसरों के साथ प्रत्यक्ष संबंध होगा[9]।

राजनीतिक विकेंद्रीकरण के साथ जुड़ा हुआ तत्त्व है आर्थिक विकेंद्रीकरण । गाँधी का दृढ़ विश्वास था कि आर्थिक शक्ति के केंद्रीकरण ने ही पूँजीवादी वर्ग को जन्म दिया जो समाज के स्त्रोतों और योग्यताओं का अनुचित लाभ उठा रहा है। शोषण समाज में हिंसा का मूल कारण होने के कारण गाँधी ने अपने आर्थिक विचारों को इस तरह प्रतिपादित किया कि वे व्यक्ति द्वारा व्यक्ति का शोषण समाप्त कर सकें। यहाँ गाँधी का मूलमंत्र था आर्थिक विकेंद्रीकरण ग्राम स्तर पर इस आर्थिक विकेंद्रीकरण का अर्थ था कुटीर और छोटे उद्योगों का निर्माण तथा खादी का सर्वव्यापक प्रयोग। साथ ही साथ, गाँधी बड़े पैमाने पर उत्पादन के विरुद्ध नहीं थे। वे स्वाचालित मशीनों के भी स्वभावतः विरुद्ध नहीं थे । परंतु वे मशीन द्वारा व्यक्ति के शोषण के विरुद्ध थे। उनका कहना था कि उत्पादन लोगों द्वारा किया जाये, फैक्टरियों द्वारा नहीं। इस संदर्भ में उसने ट्रस्टीशिप की धारणा प्रस्तुत कीं । इसका अर्थ था। कि पूँजीपति और जमींदार अपनी जमा पूँजी अथवा धन एक ट्रस्ट को सौंप देंगे ताकि इस धन का समाज के सामान्य हित के लिये प्रयोग किया जा सके। उसने समाज के धनी वर्ग की नैतिक चेतना से अपील की कि वे ट्रस्टीशिप के लिये अनुकूल वातावरण तैयार करें। ट्रस्टीशिप का यह सिद्धांत इस परिकल्पना पर आधारित था कि आर्थिक शक्ति का नियंत्रण समूचे समाज के पास होना चाहिए जहाँ प्रत्येक व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं के लिये कार्य करने के लिये खुद जिम्मेवार है और संपत्ति का स्वामित्व समुदाय के कल्याण के लिये है। ट्रस्टीशिप सिद्धांत के दो अंग थेः स्वामित्वहीनता तथा रोटी के लिये – श्रम [10]। स्वामित्वहीनता का अर्थ था प्रत्येक व्यक्ति स्वामित्व केवल खाने–पीने तथा अन्य अनिवार्य आवश्यकताओं तक सीमित रखे। इसके अतिरिक्त किसी भी तरह का धन संचय अनैतिक है। रोटी–के–लिए–श्रम का अर्थ है कि अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये प्रत्येक व्यक्ति शारीरिक श्रम करे । संक्षेप में, गाँधी के आर्थिक विचारों का सार यह था कि प्रत्येक व्यक्ति समाज में एक सादा जीवन व्यतीत करें, अपने को जीवन की मौलिक आवश्यकताओं तक सीमित रखे, आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये शारीरिक श्रम करे तथा आर्थिक शक्ति का अधिकतम विकेंद्रीकरण हो ताकि यह समाज में कल्याण का साधन बन सके।

स्वराज –स्वराज से गाँधी का अभिप्राय आत्म शासन या सच्चा प्रजातंत्र । उसका मानना था कि छोटे ग्राम समुदायों पर आधारित राज्यव्यवस्था ही सच्चा प्रजातंत्र है । प्रजातंत्र इस मौलिक तथ्य पर आधारित है कि व्यक्ति अपने व्यक्तिगत और सामाजिक कार्यों को नियमित करने के योग्य हैं और जनशक्ति ही राजनीतिक शक्ति का आधार है। सच्चे प्रजातंत्र का अर्थ है राज्यव्यवस्था को इस तरह से प्रबंधित किया जाये कि इसका नियंत्रण जनता में रहे और इसे सरकार की दयादृष्टि पर कभी न छोड़ा जाये। प्रजातंत्र केवल वोट का अधिकार, कानून का शासन, संसद या राजनीतिक दलों जैसी संस्थायें नहीं है बल्कि यह जीवनयापन का एक दृष्टिकोण भी है जिसे जनशक्ति का विकास करके ही यथार्थ बनाया जा सकता है[11]।

रामराज्य –केवल जब आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और नैतिक स्तर पर स्वराज्य की प्राप्ति होगी, तभी रामराज्य स्थापित हो पायेगा। गाँधी के लिये रामराज्य का अर्थ है बुराई पर सच्चाई और भलाई की जीत[12] । जैसा कि आरंभ में कहा गया, गाँधी का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति के जीवन को नैतिक दृष्टिकोण से ऊँचा उठाना था और रामराज्य एक ऐसे राज्य का स्वरूप है जो व्यक्ति की रचनात्मक और भाईचारे की शक्तियों को विकसित

करने का पूरा अवसर देता है। यह एक ऐसे राज्य की परिकल्पना है जो शक्ति का खंडन करती है, बल प्रयोग का परित्याग करती है, जो प्यार और सद्भाव पर आधारित है तथा सामाजिक सदस्यों की नैतिक भावना द्वारा निर्देशित होती है।

संदर्भ सूची

1 कृष्ण गोपाल, गांधी, नेहरू, टैगोर और अम्बेडकर के विचार, (नई दिल्ली, जवाहर प्रकाशक और वितरक, 1994)।
2 नागेश्वर प्रसाद, हिंद स्वराज एक फ्रेश लुक, नई दिल्ली, गांधी पीस फाउंडेशन, 1985)।
3 पारेख, बी, गांधी के राजनीतिक दर्शन एक महत्वपूर्ण परीक्षा, हाउंडमिल्स मैकमिलन, 1989।
4 राघवन, अय्यर, द मोरल एंड पॉलिटिकल थॉट ऑफ महात्मा गांधी नई दिल्ली 1974।
5 रज्जाज़ मुन्नीफ़ल, राष्ट्रवाद के अर्थ का विकास यॉर्क, डबलडे एंड कंपनी, 1963।
6 वरमानी आर.सी., भारत में ब्रिटिश उपनिवेशवाद, नई दिल्ली, लेखक गिल्ड, 1983)।
7 बोस, एन.के., स्टडीज इन गाँधीयन, अहमदाबाद नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, 1972
8 चटर्जी, एम., गाँधीज रिलिजियस थौट, लन्दन, मैकमिलन, 1983
9 शर्मा, नरेश कुमार, "रिफ्लेशन्स ऑन गाँधीज इकोनॉमिक आइडियाज", महात्मा गाँधी, दिसम्बर, 2010
10 अय्यर, आर. एन., द मोरल एण्ड पॉलिटिकल थौट ऑफ गाँधी, बॉम्बे, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1973
11 रडोल्फ, एल., एण्ड रडोल्फ, एस., द मॉडर्निटी ऑफ ट्रेडिशन, चिकागो यूनिवर्सिटी ऑफ चिकागो प्रेस, 1967
12 शैले, क्रीतिं, इकोनॉमिक आइडियाज ऑफ महात्मा गाँधी, इकोनॉमिक डिस्कशन, एन. डी. 1973